IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
onal Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 5, Issue 1, May 2019 Impact Factor: 4.819

^Fkexk ugh fonkg^ miU;kl(l=kl l lkgl dh ,d egkxkFkk

Mk je'k ;kno
vfl0 ikQlj & fgnh
jktdh; LukrdkRrj egkfo|ky;] djkuk] 'kkeyh

'थमेगा नहीं विद्रोह ' उपन्यास सन् 2008 में प्रकाशित हुआ था। दलित उपन्यासों की परंपरा बमुश्किल दो दशक पुरानी है। इस परंपरा के आरंभिक उपन्यासों के लिए सामान्यीकरण करे तो इनमें एक पैर्टन पाया जाता है। दलित जीवन वंचना में जीता है। उसको अपने महापुरूषों से प्रेरणा प्राप्त होती है। वे शिक्षा को आंदोलन की तरह अपनाते है और बदलाव की जमीन तैयार कर देते है। उमराव सिंह जाटव का उपन्यास इस मायने में अद्भुत है कि यह उस पैर्टन को तोडता है। यह उपन्यास , अगर रेणु के शब्दों में कहे तो उस दलित जीवन को दिखाता है– जिसमें शूल भी है , फूल भी है और धूल भी । और लेखक किसी से दामन बचा कर नहीं निकला है। यह तय करके लिखा गय उपन्यास नही है। इसमें दलित समाज में बाबा साहेब अम्बेडकर और बौद्व धर्म के विचारों की उर्जा की झलक दी गई है। लेकिन लेखक की लोकतांत्रिक चेतना अपने पात्रों को अपने वैचारिक आग्रह से सामान्य रूप से मुक्त रखती है। हम इस कथन में देख सकते है –''चार मुहल्लों में ..... बॅटा है जटवाडा और इन चारों मुहल्लों में मुकदमें बाजी , जूतमपैजर , सिर फुटव्वल चलती ही रहती है। बाबा साहब के मूल मंत्र 'संघर्ष करों ' का इन्होने यही अर्थ लिया है ! आओं हम आपस में ही संघर्ष करें । '' पहले के दलित उपन्यास परंपरा से आगे यह उपन्यास अपने खुले वर्णन से आश्चर्य कर देने वाली प्रगति की मानों घोषणा करता है। और इस बात की घोषणा भी दलित समाज ही नहीं दलित लेखन धीरे धीरे आत्मविश्वास की ओर बढ रहा है।

इस आत्मविश्वास का एक प्रतीक मथुरा है जो बार बार अपमानित होने , पीछे धकेले जाने के बाद भी अभी भी कहता है कि थमेगा नहीं विद्रोह । यह अपने समय का बोध है तो भविष्य का आभास भी। अभी दलित समाज प्रभु जाति गूजर के सामने भले ही जीत नहीं पाया है। लेकिन मथुरा ही नहीं दरियापुर के सभी पात्र चेतना की इस गति को पहचाते है । लेखक ने इस गति को परखते हुए दलित जीवन को नितांत अलग रूप में प्रस्तुत किया है। यह रूप पहले कभी देखा नहीं गया। दलित जीवन के इतने विविध रूप पहली बार किसी रचना में आए है। एक ओर निरीह सा मथुरा , भाग्य की मारी भागमली , औरत के धोखे में बाबा खडेसिरी बनने वाला मुंडा , हिन्दू धर्म के लिए बावरा होने वाला तुल्ला भगत तो परम स्वछंद चावली । यह विविधता शायद उपन्यास के परंपरागत रूप मे समा नहीं पाती है। फलत; यह रचना उपन्यास के ढांचे में कई कहानियों को गूंथ कर निकलती है। इसलिए इस उपन्यास के विवेचन तत्व दूसरे उपन्यासों से अलग है।

इस उपन्यास के अध्ययन मे निम्न बिदुओ पर शोध की दिशा केन्द्रित है – ;

- ❖ दलित समाज की जीवंतता से परिचय
- ❖ दलित संघर्ष की बारीकियों की पहचान

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
onal Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 5, Issue 1, May 2019 Impact Factor: 4.819

- ❖ सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता
- ❖ दलित जीवन की भाषा और उसके चरित्रों का सही संदर्भ

समानता की यह प्रबल चेतना केवल एक दो में नहीं बल्कि पूरे समाज में फैल चुकी है– क्या स्त्री ! क्या पुरूष ! और क्या बालक ! चेतना का पहला बिन्दु अपने दुख का बोध है , आगे इसके कारणों की पहचान हैं और तीसरा समाधान का संघर्ष है। दरियापुर में जटवाडा के निवासी प्रक्रिया के तीसरे चरण में है। इस स्थिति का श्रेय किस बात को है। प्रदेश के अन्य दलित जातियों की अपेक्षा जटवाडा के दलित कहीं बेहतर है और अपने 'दादलाई ' जैसे अधिकारों को पहचानने की और उसके लिए संघर्ष करने की स्थिति में है। दूसरा , ब्राहाण–क्षत्रिय और भूस्वामित्व का प्रचंड एकाधिकार मानों इस दरियापुर में अनुपस्थित है। गूजर धन और संख्या बल के कारण अभी तो मथुरा की सेना पर भारी है। लेकिन लेखक के संकेतों से पता चलता है कि दलित बस्ती में बौद्व धर्म और शिक्षा की चेतना में प्रवेश हो चुका है। बाबा साहब अम्बेडकर के विचार और कर्म प्रत्यक्ष नही तो पार्श्व रूप में निरंतर उपस्थित है। यह बस्ती बौद्विक स्तर पर आगे निकल सकती है। यहीं वजह है कि गूजर पंचायत को जटवाडा के 'लंडेरों ' से अब भय होने लगा है। लंडेर पढे लिखे नौजवानों को कहा जाता है। एक मुकाम ऐसा आता है गूजर पंचायत के हमले के पहले ही जटवाडे के दलित हमला करने को तैयार होते है। दलित बस्ती को जब गूजर नियंत्रित करने में असफल हो जाते है तब वे इसके सम्मान पर हमला करने की योजना बनाते है।

साजिश के तहत गूजर लडको द्वारा वृद्व मानी जाने वाली अकेली रामबती की अस्मत पर हमला किया जाता है। रामबती इस जलालत से बचने के लिए आत्महत्या कर लेती है। उसकी आत्महत्या से , जटवाडा में पुन; संघर्ष का दावानल भडक उठता है। केवल परिवर्तन की शक्तियां ही नहीं उन्हे भोथरा करने वाली शक्तियां भी कार्य कर रहीं है। आर्यसमाज ऐसा ही संगठन है। इसमे दलितों की अपने कांतिकारी चेतना को हिन्दू चेतना के आवरण में समाहित करने का प्रयास होता है। इसके भटकाव में डालचंद आर्य जैसे कुछ लोग अवश्य है। वही तुलाराम भगत जैसे कुछ लोग अभी भी हिन्दू धर्म और मंदिरों का मोह छोड नहीं पाते है। लेकिन बाकी दलित समाज इससे अपनी दूरी बनाए रखता है और वह भावनात्मक रूप से बौद्व धर्म से जुडा है। हालांकि यह जुडाव इतना स्पष्ट नहीं है कि पहली नजर मे साफ हो जाय। चावली के पिता ने आर्य समाज की जघन्य हकीकत को अपनी बेटी की इज्जत जाते समय देख लिया है। यही नही चावली को अपनी मॉ बिदूषक नजर आती है। वह किसी महात्मा जी का हवाला देती है। उनके हवाले यह समझााना चाहती है कि जाति की विषमता मनुष्य की नहीं देवों की रचना है। लेकिन चावली अपनी मॉ और महात्मा दोनों की सोच को नकार देती है। यह संकेत है कि दलित जीवन का वर्तमान अपने गर्भ से उस भविष्य को जन्म देगा जिसमें किसी भागमली का व्याह तपेदिक रोगी से व्याहना नही पडेगा , किसी दसौंदी को मरना नही पडेगा और न किसी रामबती को आत्महत्या नहीं करना पडेगा।

अन्य सामाजिक समूहों में मुसलमान और बाल्मिकी शामिल हैं। मुस्लिम के साथ उसी तरह से व्यवहार किया जाता है , जैसे एक जाति गॉव की दूसरी जाति के साथ करती है। यह दर्शता है कि धार्मिक बोध अभी भी गांव की सामजिक पहचान का तत्व नहीं है। कभी कभार धार्मिक दंगे का उल्लेख होता है लेकिन वे गॉव की आंतरिक गतिविधियों का परिणाम नहीं बाहरी तौर पर रोपे गए लगते है। हमीद लुहार और खाला को अपने धार्मिक मान्यताओं के कारण किसी तरह के अतरिक्त दवाब का सामना नहीं करना पडता है। जाति ही गॉव में सामाजिक व्यवहार का आधार है। यहॉ तक कि मुस्लिम हामिद को अपने 'अंसारी' पहचान से गिरकर 'लोहार ' बनने में हेठी जान पडती है। वह अपनी बेटी के विवाह के लिए निम्न जाति वर की संभावना को खारिज करता है। बाल्मिकी बस्ती में यह समाज अपनी जाति की दीवारों के भीतर जी रहा है। जटवाडे से इसके

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 5, Issue 1, May 2019 Impact Factor: 4.819

सम्बन्ध के सूत्र तब दिखाई पडते हैं जब दरियाव इस बस्ती मे किसी जिंदा मिथक की तरह जीने वाली चावली से मिलने जाता है।

दरियापुर में स्त्री सामंती परिवेश में ही जी रही है। उसकी सामाजिक हैसियत पुरूष समाज की सम्पत्ति के समान है। वह स्वयं सम्मान का विषय नहीं है बल्कि समाज के सम्मान का बिजूका मात्र है। जब गूजर पंचायत अपनी हार से तिलमिला उठती है , तब वे जटवाडा की इज्जत पर हमला करते है। इस बस्ती की स्त्री की अस्मत पर हमला करते है। स्त्री के साथ जोर जबरदस्ती के अधिकतर मामलों में यौन के बजाय पितृसत्ता की मानसिकता के तहत पुरूष अहं को दर्शाना ही मुख्य मकसद होता है। लेकिन उपन्यास मे कई विलक्षण स्त्री पात्र है। यें पात्र सामान्यीकरण से अलग अपना वजूद रखते है।

आरंभ में ही हमें खाला के दर्शन होते है। खाला समूचे दरियापुर की खाला है। जाति और मजहब की दीवारे से परे सभी के साथ उनका बात –व्यवहार है। गॉव वाले भी उन्हे कुछ मजाक में , कुछ लगाव मे खाला कहकर बुलाते है। खाला की सबसे बडी विशेषता उनकी जिंदादिली है , खुशमिजाज स्वभाव है । उनके पास खुश रहने की कोई वजह नहीं है। उम्र के इस पडाव में भी उनका व्याह नहीं हो पाया है ,, न पति , न बच्चे । भाई के घर में आसरा है। जब चाहा इज्जत दी और जब चाहा तो इज्जत उतार भी दी। इसके बावजूद उनके भीतर अदम्य जीवन की शक्ति है।

गॉव में आवारा सौनपाल का तपेदिक से निधन हो जाता है। तपेदिक की छूत को उस समय किसी प्रलय से कम नहीं समझा जाता था। कोई गॉव वाला उसकी लाश के पास फटकने को तैयार नहीं था। ऐसे में खाला ने मोर्चा सम्हाला और लोगों की इंसानियत को ललकार कर उसके कफन–दफन का प्रबंध करवाया । वे धार्मिक है लेकिन उनके धर्म के बोध में सभी जातियों और सभी मनुष्यो के लिए जगह है। लेकिन जिन्दगी के लिए उनकी ललक का स्रोत्र क्या है ? शायद प्रेम । छह फुट की कडियल खाला को देखकर उनके प्रेमी हृदय होने का आभास नहीं होता है लेकिन प्रेम का तो चरित्र ही ऐसा होता है कि सीमाओं का अतिक्रमण करता है। गॉव में आने वाला पागल सा फकीर ही उनका वह प्रेमी ठहरता है। दोनों में लगन की गहराई इतनी थी कि उसने अपना मजहब भी छोड दिया । एक ओर अपने खानदान की इज्जत तो दूसरी ओर आत्मा का चीत्कार । लेकिन खाला न तो प्रेमी से मिल पाती है और न ही उसको छोड पाती है जिसका अंत बहुत ट्रेजिक होता है। इस ट्रेजेडी का शिकार न केवल खाला होती है , प्रेमी फकीर होता है बल्कि हामिद लुहार भी होता है। यह ट्रेजडी उपन्यास में कई सवाल छोड जाती है।

उपन्यास में दूसरी सशक्त पात्र के रूप में भागमली अथवा भागों उपस्थित है। भागो की उम्र मात्र अठारह साल है। इस उम्र में ही उसमें दुनिया भर की समझदारी समाई हुई है। वह अपनी उम्र की लडकियों से अलग थलग एकांत में रहती है। गंभीरता और उदासी उसके चेहरे पर सदा ही बने रहने वाले भाव है। उपन्यास का सूत्रधार 'दरियाव ' भी बचपन में अकेलेपन से जूझता है। वह एक ताबेदार की तरह भागों को अपना 'बॉस' बना लेता है। इस निकटता के बाद भागों अपने मन की गॉठ खोलने लगती है। जहॉ और लडकियॉ इस उम्र में सुनहरे ख्वाबों में डूबी रहती है , वहीं भागों एकांत में गुमशुम रहती है। वह अपने नाम मे छिपे कटाक्ष का अहसास करती है। उसके पैदा होते ही पिता को नत्था गूजर के खेत में मजूरी का काम मिल गया था। इसलिए उसका नाम भागो –भाग्यवाली रखा गया। जन्म की खुशी में पिता ने ढेर सा कर्जा लिया । पैसा तीर्थ यात्रा , मनौती और दर्शन में खत्म हो गया। और जिन्दगी कर्ज के मर्ज में फॅस गई। भागों इस दशा के लिए खुद को जिम्मेवार मानती है। उसका निरपराध का अपराध बोध इतना गहरा है कि पिता को बचाने के लिए तपेदिक रोगी के साथ विवाह को तैयार होती है। दरियाव की ऑखों के सामने वह मर रही है .... या कहें आत्महत्या कर रही हैं।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
onal Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 5, Issue 1, May 2019 Impact Factor: 4.819

तीसरी स्त्री चावली कई मायने में अलग है। वह आक्रामक और आजाद है। उसकी आजादी किसी की मोहताज नहीं है। 50 वर्ष की उम्र में भी जिन्दगी को यथासंभव जीने की कोशिश कर रही है। तीनों पात्रों में उसकी सामाजिक चेतना सबसे प्रखर है। वह बचपन में ही अपनी मॉ के बजाय पिता से ज्यादा जुडी। पिता एक स्वाभिमानी दलित थे। बाल्मिकी जाति के पेशे से अलग वे एक बेहतर जीवन की तलाश में संघर्ष करते रहे। कभी आर्यसमाज तो कभी ईसाई समाज के पास जाते रहे । लेकिन उन्होने सम्मान से समझौता नहीं किया। पिता का यह गुण चावली ने मानों विरासत में पाया । उसने बचपन में आर्यसमाज मठ में बलात्कार जैसे जघन्य अपराध का सामना किया था। लेकिन यह सब उसको तोड नहीं पाते है। जिन्दगी में कुछ लोग वहीं से उठते है ,जहॉ कभी उन्हे तोडा गया था। चावली भी ऐसी ही सशक्त चरित्र है। उसमें भागो जैसा अपराध बोध नहीं है और न ही खाला जैसी साहस की कमी से उभरी दयनीयता और नियति स्वीकार का भाव है। वह खूब कमाती है और ऐशो आराम , जो उपलब्ध हो सकते है , से रहती है। उसकी आवाज में वो रूआब है कि दरियाव का दिल बैठ जाता है।

इस उपन्यास की विशेषता है कि इसमें दलित समाज को उसकी समग्रता से साथ प्रस्तुत किया गया है। इसमें गूजर ,मुस्लिम ,गॉव और कस्बा सभी कुछ कम बेशी होकर भी शामिल है। कविता की तरह उपन्यास का फलक सीमित नहीं हो सकता है। इसमें उपन्यास के परंपरागत शिल्प का पालन नहीं किया गया है – एक कथानक हो और वह कार्य कारण की श्रृखलां से आगे बढता चले। इसे कई कहानियों के आधार पर बुना गया है। ये कहानियॉ एक दूसरे को काटती नही है। संभव है खाला भागों से परिचित न हो और चावली को मुडां की पत्नी की जानकारी भी न हो अथवा इन सबकी कहानी समानांतर चलती रहे । लेकिन इससे कथा प्रवाह में कही भी बाधा नहीं आती है। इनको सूत्र धार आपस में बाधे रहता है। कई बार कथा जब सूत्रधार के बस के बाहर होती है तो नया सूत्रधार आ जाता है। दरियाव जब चावली के जीवन की कहानी जानने उसके पास पहुचता है। जब कहानी शुरू होती है तो सूत्रधार चावली बन जाती है। इस प्रकार यह शिल्प एक प्रयोग होते हुए भी उपन्यास को सशक्त रूप देता है।

उपन्यास की भाषा के रूप में खडी बोली के ठेठ रूप का प्रयोग किया गया है। ऐसे क्षण में पश्चिमी उ0प्र0 अपने पूरे ठाठ के साथ उपस्थित होता है – '' वा साले सौनू शराबी की बात कर रहे हैं मोय तौ ऐसौ लगै । गॉव भर में और कोण सैतान है वा सू जादा '' लेकिन यह भाषा समान रूप में नहीं रहती है । नैरेटर की भाषा में सर्जनात्मकता के दर्शन होते है। यह बोलचाल के रूप के निकट होते हुए भी अर्थ को दूर तक ले जाती है – 'कई लम्बे क्षणों तक हमीद के दरों दीवारों तक को यू ताकता मानो उस पार के सच को खोजने का प्रयास कर रहा हो ' लेखक ने अपनी भाषा को मुहावरों , लोकोक्तियों और लोकगीतों से सिरजा है जिसमें गॉव जीवंत हो उठा है। लेकिन उनका कौशल भाषा नहीं लोगों की मानसिकता को पकडने में है जिससे किसी भाषा का मिजाज बनता है। गॉव में यौन सम्बन्ध पर खुला नजरिया नहीं होता है। वे एक ओर इसे जताते है और फिर छिपाते भी है। ऐसे अवसर के कारण दो अर्थी भाषा सामने आती है – '' कैसी जावै है ,तू आगै कै मै आगै ''

'थमेगा नहीं विद्रोह ' उपन्यास दलित उपन्यास परंपरा में सार्थक आयाम जोडने वाला उपन्यास है। इसकी सार्थकता दलित समाज के जीवंत निरूपण में है। यह जीवंत भाव उनके संघर्ष की भावना का विस्तार है। अब वे दमन को किसी भी रूप में स्वीकार करने को तैयार नहीं है। इस संकल्प को हम उनके जुझारू तेवर ही नहीं क्रांतिकारी विचारों में भी देख सकते है। न ही दलित समाज आर्य समाज के झंडे के नीचे आने को तैयार है , न ही वह तुल्ले भगत की हिन्दू आस्था में साथ देने को तैयार है। उनके लिए सबसे बडी हकीकत उनकी जाति है और यह जाति नए प्रगतिशील मूल्यों के साथ है , आधुनिक शिक्षा के साथ है , बाबा साहब अम्बेडकर के दर्शन के साथ है और बौद्व धर्म की समता के साथ है। इस चेतना प्रवाह में केवल पुरूष ही नहीं

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
ɔnal Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 5, Issue 1, May 2019 Impact Factor: 4.819

स्त्रियॉ भी शामिल है । समाज की आधी आबादी अगर अलग थलग है तो कोई भी आंदोलन सफलता की दहलीज तक पहुँच नहीं सकता । चावली और भागो जैसी नारी इस चेतना का उदाहरण है । इनके संबल पर ही बुजुर्ग मथुरा कहा सका –' थमेगा नहीं विद्रोह । '

मूल ग्रंथ ;

- थमेंगा नही विद्रोह ; उमराव सिंह जाटव , वाणी प्रकाशन 2008

सहायक ग्रंथ ;

- दलित साहित्य का समाजशास्त्र – डॉ. एच.एल. बाछोटिया (स्वराज प्रकाशन)
- दलित साहित्य का वैचारिक आधार – डॉ. दयानंद बटवाल (अमन प्रकाशन)
- दलित साहित्य की विकास यात्रा – डॉ. पुष्पलता (अनामिका प्रकाशन)
- दलित कविता के प्रतिमान – डॉ. बजरंग बिहारी तिवारी (शिल्पायन प्रकाशन)
- दलित कथा साहित्य संवेदना और सरोकार – डॉ. प्रेम कपाड़िया (वाणी प्रकाशन)
- हिंदी दलित साहित्य एक मूल्यांकन – डॉ. चंद्रकला (अक्षर प्रकाशन)
- दलित विमर्श की भूमिका – कँवल भारती (इतिहास बोध)